ओ३म्

शास्त्रार्थखुर्जा ॥

जो

आर्यों और पौराणिकों में मूर्त्तिपूजा विषय पर ता० ११ मई से १३ सन् ९० तक तीन दिन खुर्जा जि० बुलन्दशहर में हुआ ॥

पं० तुलसीराम जी ने शुद्ध कर लिखा आर्यसमाज खुर्जा की आज्ञानुसार

पं० भीमसेन शर्मा ने शोधकर

सरस्वतीयन्त्रालय

प्रयाग में

छपाया ॥

संवत् १९५०

द्वितीयबार १५०० मूल्य प्रतिपुस्तक -)

2 . 15

ओ३म्

शास्त्रार्थ ख़ुर्जा

इस शास्त्रार्थ का हेतु प्रथम यह हुआ कि सीकरा आर्य्य-समाज के सभासद् पं० खमानीराम जी से और खुरजे के पं० कृष्णानन्द जी से वै० शु० १२ सं० १९४७ वि० को शास्त्रार्थ नियत हुआ था तदनुसार तहसील खुरजा ग्राम धराऊं में जहां शास्त्रार्थ ठहरा था आर्य्यसमाज सीकरा के बुलाये आर्य्य पण्डित भूमित्र शर्मा कर्णवास से और पण्डित तुलसीराम शर्मा कुचेसर से आये और धर्मसभा के पक्ष में पं० कृष्णानन्द और त्रिवेणीदत्त [धरपा ग्राम] जी ने भी एक शिवालय पर अपनी इच्छानुसार जंगल में शामियाना खड़ा किया और कुछ ग्रामीण मनुष्यों में लगे डींग मारने कि आर्य्यसमाजी शास्त्रार्थ को नहीं आते और समाज में एक पत्र भेजा कि यदि तुम लोग शास्त्रार्थ में न आवोगे तो तुम्हारी पराजय समझी जायगी इस का उत्तर ठाकुर महावीर सिंह जी वर्म्मा चांदोख की सम्मत्यनुसार पण्डित तुलसीराम शर्मा ने लिखा कि:—

श्रीमन्भावत्कच्छान्तशान्तसदसदुदन्तालब्धगरिष्ठवरिष्ठेषु निजविद्याह्रादशात्मरश्मिभिरतिघोरजगन्मिशानिशीथशयितजनताविदारिताऽसंविदन्धतमसेषु बहुशो नतय आशिषश्च भूयासुस्तमाम्—अथ यदुक्तं छद्द्वाराश्रीमद्भिरत्रागम्यतां

शास्त्रार्थार्थमिति तत्रेदमाविष्क्रियतेऽनुयुज्यते चा-
स्माभिः किमत्रागमक यद्दयमेवाग्रहेण पाषाणा-
दिकल्पितदेवालयसमीपमाहूयन्ते न च यूयमत्रा-
जिगमिषथ किमत्र बाधकं बाधकोद्घाटनमन्तरा
न यूयं प्रभवथाग्रहायातः प्रार्थ्यते सभ्यजनरीति-
पुरस्सरं नियमान् स्थानं प्रबन्धकर्त्तारश्च स्थिरी-
कृत्य प्रेषयन्तु दलमित्यलं बहुज्ञेषु विरम्यतेऽतो-
ऽधिकोक्त्या— भवत्सुहृत्तुलसीराम—शर्म्मा।

(१ बजे मध्यान्ह वै० शु० १२ वृ०)

आशय—जो कि आपने लिखा कि यहां शास्त्रार्थ करने को चले आइये हम आप से पूछते हैं आप ही यहां क्यों न चले आवें? क्योंकि केवल आप ही कल्पित (फर्जी) शिवालय पर बुलाने में प्रभु नहीं है इस लिये प्रार्थना है कि सभ्यता पूर्वक नियम, स्थान और प्रबन्धकर्त्ता को नियत करके शास्त्रार्थ का पत्र भेजिये इति ॥

इस पत्र पर भी कई पत्र भेजे और शिवालय पर ही शास्त्रार्थ विना नियमों के करने का आग्रह करते रहे। पाठकगण! किसी मत (मजहब) सम्बन्धी स्थान पर उस मत के विरुद्ध शास्त्रार्थ को कभी आप शान्तिपूर्वक कार्य्य पूर्त्ति का साधक मानते हैं? नहीं २ बाधक ही होगा परन्तु तौ भी यह समझा गया कि ये लोग ऐसा कोलाहल मचाये विना न रहेंगे कि आर्य्यसमाजी शास्त्रार्थ से हठ गये इस

लिये सब आर्य्य लोग मिलकर ठाकुर जवाहिरसिंह के स्थान पर जो हिन्दूधर्म के साथी और शास्त्रार्थ के प्रेरयिता थे गये और धर्मसभा के पण्डितों और उक्त ठाकुर साहब को बुलाकर कहा कि आप अपने ही स्थान पर शास्त्रार्थ करा लीजिये फिर भी पण्डितों ने यही उत्तर लिखा कि शिवालय पर नहीं तो बगीचा में जहां किसानों के पैर पड़े हैं वहां कर लो किन्तु ग्राम के भीतर अपने स्थान पर भी करना स्वीकार नहीं किया उक्त ठाकुर साहब जवाहिरसिंह ने यद्यपि एक वार मान भी लिया कि अच्छा यह मेरा स्थान है यहां तो हो जाना ठीक है परन्तु पण्डितों ने उक्त ठाकुर साहब (जो उन्ही के अनुयायी थे) कथन को भी स्वीकार नहीं किया और यह कह कर उठ गये कि शास्त्रार्थ करना हो तो उक्त बगीची में कर लो यहां नहीं भला ! विचारना चाहिये कि जब उन्होंने अपने स्थान पर भी शास्त्रार्थ होना नहीं माना तो क्या सिवाय दंगे फिसाद के बगीची में उन के कौन से देवता गड़ रहे थे जो शास्त्रार्थ में सहायक होते इतने पर भी शास्त्रार्थ स्वयं न करके खुरजे में प्रसिद्ध करने लगे कि आर्य्यसमाजी शास्त्रार्थ से हट गये तब तो ठाकुर महावीर सिंह वर्मा ने यही विचारा कि जिस स्थानका इन को यह घमण्ड है कि यहां आर्य्यों की कुछ नहीं चल सक्ती और न यहां आर्य्यसमाज है एक वार इन से वहीं निपट लें यह विचार खुरजे में जाय सीकरी के रईस एक ठाकुर साहब की चौपाल पर ठहरे और कसबे में नोटिस दिया कि आर्य्यसमाज सीकरा आज ४ मई को खुरजे में उक्त चौपाल

पर ठहरा है और जब तक आप (हिन्दूधर्म्मी) शास्त्रार्थ न करेंगे ठहरा रहेगा इस नोटिस से तो नगर के लोग हिन्दू पण्डितों से कहने लगे कि तुम तो धराऊं में आर्य्यों को हठा बतलाते थे आर्य्यलोग तो तुम्हारे खुरजे ही में शास्त्रार्थ का विज्ञापन देते हैं अब तुम शास्त्रार्थ क्यों नहीं करते ऐसा कहने पर कुछ मनुष्यों को साथ ले पं० कृष्णानन्द और पं० त्रिवेणीदत्त जी आये जब उन के सन्मुख शास्त्रार्थ के नियम रक्खे गये तो कभी तो कहते हैं कि वेद संहितामात्र को ही मानेंगे कभी यह कि शास्त्रार्थ लिख कर न करेंगे कभी यह कि हम ईश्वर के हाथ, नाक, कान आदि सिद्ध न करेंगे निदान इसी प्रकार वह दिन टल गया अगले दिन आर्य्यसमाज ने फिर नगर में शास्त्रार्थ का विज्ञापन दिया कि यदि आज भी आप लोग शास्त्रार्थ न करेंगे तो पलायित समझे जांयगे इस पर मुन्शी शुकदेवप्रसाद साहब द्वारा निम्नलिखित शास्त्रार्थ के नियम स्थिर हुयेः—

१—आज आर्य्यसमाज व धर्म्मसभा के मध्य दोनों पक्ष की इच्छानुसार शास्त्रार्थ होगा ॥

२—इस शास्त्रार्थ में चार वेदमन्त्र संहितामात्र स्वतःप्रमाण और अन्य सब परतःप्रमाण माने जायेंगे ॥

३—जब किसी मन्त्र के अर्थ पर झगड़ा होगा तो साम, गोपथ, शतपथ, ऐतरेय, अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निघण्टु और निरुक्त का प्रमाण लिया जायगा ॥

४—शास्त्रार्थ में दोनों पक्ष वालों को ३० । ३० मिनट दिये जायंगे ॥

५—दोनों पक्ष वाले अपने आशय को भाषा में लिखेंगे प्रमाण को संस्कृत में, लिखकर सभा को सुनावेंगे ॥

६—शास्त्रार्थ केवल मूर्त्तिपूजन पर होगा सिद्ध करने वाले को परमेश्वर की मूर्त्ति किसी तरह की आकृति सिद्ध करनी होगी ॥

७—जो पक्ष असभ्यता से वर्त्तेगा वह सभा से बाहर कर दिया जायगा ॥

८—शास्त्रार्थ की तीन कापी होंगी एक २ उभय पक्ष और एक प्रबन्धकर्त्री सभा के पास रहेगी । ये तीन कापी हस्ताक्षर युक्त होंगी—

९—मण्डन वा खण्डन करने वाला केवल मन्त्र का ही प्रमाण देगा ।

१०—यह शास्त्रार्थ ११ मई स० १८९० ई० आदित्य वार प्रातः-काल ७ बजे से आरम्भ होगा ।

उपरोक्त नियमों के अनुसार ११ मई सन् ९० को शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ—यद्यपि आर्य्यसमाज का पक्ष प्रतिमा-पूजन का निषेध था इस लिये प्रतिमापूजकों को अपना पक्ष पुष्ट करने को वेद से विधि दिखलानी चाहिये थी परन्तु उन के इस आग्रह से कि हम प्रथम विधि नहीं दिखाते तुम ही निषेध पर वाक्य दिखलावो तब सर्वस-म्मत्यनुसार आर्य्यसमाज की ओर से निम्नलिखित लेख पं० तुलसीराम शर्म्मा ने सभा में सुनाया:—धर्मसभा के मन्त्री मुं० शुकदेवप्रसाद और आ० स० के ठाकुर महावीर सिंह जी नियत हुये—

(पत्र आ० स० सं० १)

ओ३म्

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यार्थं रताः ॥ ७ ॥

यजु० अ० ४ मं० ९

अर्थ-(ये) जो लोग (असम्भूतिम्) कारणरूप, परमाणुओं की (उपासते) उपासना करते हैं वे (अन्धन्तमः) निविड़ अन्धकार में (प्रविशन्ति) प्रवेश करते हैं (उ) और (ये) जो लोग (सम्भूत्याम्) कार्य्यरूप, परमाणुजन्य पदार्थ में (रताः) प्रीतिपूर्वक उपासना में लिप्त हैं (ते) वे (ततो, भूय, इव) उस से भी अधिक अज्ञानान्धकार में प्रवेश करते हैं इस मन्त्र से सिद्ध है कि परमाणु और परमाणुजन्य पदार्थों की उपासना दुःखदायक है—११-५-९०

ह० तुलसीरामशर्म्मणः ह० कुमारसेनशर्म्मणः

(फ़ारसी) मुं० शुकदेवप्रसाद जी मन्त्री-ठाकुर महावीरसिंह मन्त्री आ० स०। बाबू चतुर्भुजदास धर्मम० प्रेसीडेन्ट-

इस के पश्चात् धर्मसभा की ओर से निम्नलिखित उत्तर आया जिस को देख कर पाठकगण विचार लेंगे कि हमारे मन्त्र के उत्तर देने में एक अक्षर भी तो नहीं लिखा अर्थात् बुद्धिमान् जन तो इसी से जान सक्ते हैं कि जब हमारे लिखे मन्त्र से निषिद्ध प्रतिमापूजन का कोई समाधान उस मन्त्र

के अर्थ द्वारा नहीं किया तो निषेध का स्वीकार हो चुका किन्तु प्रतिमापूजन की सिद्धि के लिये उन्हों ने निम्नलिखित मन्त्र ४० मिनट में दिया सब से प्रथम ३० मिनट के नियम का उल्लङ्घन उन्हों ने ही किया अस्तु वह मन्त्र यह है कि—

(पत्र सं० २ मूर्त्तिपूजक पक्ष का)

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो बृद्धाय च सबृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च॥ यजु० सं० अ० १६ मं० ३०

ह्रस्व शरीर परमेश्वर के अर्थ नमस्कार वामन स्वरूप परमेश्वर के अर्थ नमस्कार बड़े अङ्ग वाले परमेश्वर के अर्थ नमस्कार बहुत बड़े परमेश्वर के अर्थ नमस्कार वृद्ध परमेश्वर के अर्थ नमस्कार वृद्ध सहित परमेश्वर के अर्थ नमस्कार सब से आगे हुये परमेश्वर के अर्थ नमस्कार सब में मुख्य परमेश्वर के अर्थ नमस्कार—द० त्रिवेणीदत्तशर्म्मणः द० हजारीलालशर्म्मणः ता० ११ म० १८९० वक्त १० बजे ५० मिनट (फ़ारसी) में मुं० शुकदेवप्रसाद मन्त्री ध० स० ठाकुर महावीरसिंह मं० आ० स० बाबू चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट—

उत्तर से प्रथम पाठकगण यह भी विचारें कि इन्हों ने जैसे हमने पृथक्२ पद २ का अर्थ लिखा था ऐसा क्यों नहीं लिखा लिखते कहां से उस में तो परमेश्वर शब्द वा उस का पर्य्याय कहीं है ही नहीं अस्तु—

पत्र सं० ३ आर्य्यसमाज का

ओ३म्

प्रथम तो हमारे मन्त्र पर सङ्गति वा असङ्गति का विचार कर इन ४० मिनट में कुछ उत्तर नहीं आया अस्तु दूसरे जो मन्त्र (नमो ह्रस्वाय च इत्यादि) कहा उस में परमेश्वर का नाम भी नहीं आया केवल (ह्रस्वाय) बालक के लिये (वामनाय) बौने के लिये (बृहते) बड़े के लिये (वर्षीयसे) वृद्धों में अतिवृद्ध के लिये (वृद्धाय) बढ़े के लिये (सवृधे) अपने साथ बढ़ने वाले के लिये (अग्र्याय) ज्येष्ठ वा सत्कर्म में अग्रेसर के लिये (प्रथमाय) प्रख्यात के लिये—इन सबों को नमस्कार अर्थात् सत्कार करना वेद में लिखा है और यदि ये सब विशेषण परमेश्वर ही के हैं तो इसी अध्याय में (स्तेनानां पतये नमोनमः) ऐसा भी लिखा है तो क्या स्तेन अर्थात् चोरों का पति [सरगना] भी परमेश्वर ही ठहरेगा—इस लिये यह अर्थ सङ्गत नहीं है किन्तु हमारा ही अर्थ सब लोग ठीक प्रतीत करेंगे—विशेष प्रार्थना यह है कि आप लोगों को एक मन्त्र की दूसरे मन्त्र से सङ्गति भी मिलानी उचित है कहां तक लिखें उसी अध्याय का २८ वां मन्त्र यह है (नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमः) अर्थात् कुत्तों और कुत्तों के पालने वालों को भी नमः अर्थात् नमस्कार लिखी है तो आप के मत में यह विशेषण भी परमेश्वर ही के कहेंगे—फिर यजु० अ० ४० मन्त्र ८ यह है:-

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम-स्नाविरथं शुद्धमपापविद्धम् । कविर्मनीषी परिभूः । इत्यादि ॥

अर्थः—वह परमेश्वर पूर्ण हो रहा है यह अर्थ (स पर्य्यगात्) का है वह (शुक्रम्) आशुकरोतीति शुक्रम् शीघ्र उत्पन्न करने वाला (अकायम्) शरीरत्रयरहित (अव्रणम्) अच्छेद्य (अस्नाविरम्) नस नाड़ी के बन्धनों से रहित है इत्यादि विशेषण वाला तो दूसरे मन्त्र भी इस के अनुकूल होने चाहिये—

११ । ५—९० । ११ बजे ५६ मिनट ह० तुलसीरामस्य ह० कुमारसेन शर्मणः (फारसी में) मुन्शी शुकदेवप्रसाद ठाकुर महावीरसिंह बाबू चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट—

(पत्र सं० ४ मूर्त्तिपूजकों का)

नमस्ते रुद्र मन्यव उतोऽत इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ यजु० सं० अ० १६ मं० १ ॥

हे रुद्र परमेश्वर तुम्हारे क्रोध के अर्थ नमस्कार है रुद्र परमेश्वर तुम्हारे बाण के अर्थ नमः । हे रुद्र तुम्हारे भुजाओं को नमस्कार विना मूर्त्ति शरीर के क्रोध और बाण और भुज नहीं हो सकते हैं फकत, वेद जो है सिवाय परमेश्वरके किसी को नमस्कार नही कर सकता और सब का

पति वही परमेश्वर है, और आप के कहने से यह बात साबित होता है कि चोरों का परमेश्वर और है सो वेद में ऐसा अनर्थ नहीं हो सकता और ये वर्त्ता हम भी चाहते हैं हमारे आप के मन्त्र का भ्रम दूर होय द० त्रिवेणदत्त द० कृष्णदत्तशर्मणः (फारसी में) (ठाकुर) महावीरसिंह (मुन्शी) शुकदेवप्रसाद (बाबू) चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट—

इसी के साथ अगला पर्चा भी दिया गया था,

(पत्र सं० ५ मूर्त्तिपूजकों का)

अन्धंतमः प्रविशन्ति येऽसम्भूति मुपासते। ततो भूऽयइव ते तमो यऽउ सम्भूत्याथं रताः॥९॥

इस मन्त्र का यह अर्थ नहीं है जो कि तुलसीराम शर्मा ने कहा इस स्थान में प्रष्टम् है जो यजुर्वेद मन्त्र है तिस को पूर्व मन्त्र अथवा उत्तर मन्त्र से संगति विना ही कार्य्य कारण उपासना का निषेद् करता है और इस मन्त्र में ब्रह्म के स्थान में यह अर्थ किस पद का है मन्त्र के अक्षरों से तो असम्भूति अर्थात् उत्पत्ति रहित और सम्भूति अर्थात् उत्पत्तिमत् वस्तु की जो उपासना करता है सो नर्क में पड़ता है यह अर्थ प्रतीत होता है तब तो यह भी निर्णीतव्य है जो ब्रह्म असम्भूति शब्दार्थ है अथवा नहीं जो ब्रह्म भी उत्पत्तिरहित होने से असम्भूति शब्दार्थ है तो ब्रह्म उपासना से भी नर्क होगा जरूर असम्भूति शब्दार्थ ब्रह्म नह

तो सम्भूति शब्द का अर्थ होगा तो भी इस पक्ष में दोष है क्योंकि ब्रह्म को कार्यत्वापत्ति और ब्रह्म की उपासना में नर्क होगा—द० त्रिवेणीदत्त शर्मा द० हजारीदत्त शर्मा (फारसी में) (ठाकुर) महावीर सिंह म० आ० स० (मुन्शी) शुकदेवप्रसाद मं० मू० पू० बाबू चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट—

पाठकगण! विचार का स्थान है (नमो ह्रस्वाय च) इस मन्त्र का अपने अर्थानुकूल कुछ समाधान नहीं किया और फिर पूर्व मन्त्र को छोड़ दूसरे मन्त्र (नमस्तेरु०) को लिख दिया और अगले पर्चे में उस का भी उत्तर लिखा है क्योंकि यह मन्त्र भी राजपरक है ईश्वर विषयक नहीं है अपरञ्च इन की व्याकरण निपुणता का भी परिचय लीजिये जो कि प्रष्टव्य के स्थान में प्रष्टम् निर्णतव्य के स्थान में निर्णीतव्य इत्यादि—अनेक अशुद्धियां हैं जो व्याकरण से ही बड़ा स्थूल सम्बन्ध रखती हैं—और यह भी प्रतीत होता है कि यह भाषा साधुसिंह के पुस्तक सत्यार्थविवेक से नकल की गई है क्योंकि हमने अपने पर्चे में ब्रह्म के स्थान में यह वाक्य नहीं लिखा फिर ये किस से पूछते हैं कि यह किस पद का अर्थ है सो यह सम्पूर्ण लेख हमारे पर्चे से नहीं किन्तु सत्यार्थविवेक से लिखा गया है अस्तु० चाहें कहीं से हो उत्तर सुनियेः—

(पत्र सं० ६ आर्य्यसमाज का)

आप के दूसरे कथन से भी (नमो ह्रस्वाय च) का अर्थ ईश्वरविषयक नहीं सिद्ध हुआ और परमेश्वर डाकुओं का रक्षक नहीं नाशक है, और केवल इतना ही नहीं किन्तु उस अध्याय के और भी मन्त्र सुनियेः—

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो नमो निषङ्गिणऽ इषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघाꣳसद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तं चरद्भ्यो विकृन्तानां पतये नमो नमः ॥

यजु० अ० १६ मं० २१ ॥

(वञ्चते) ठगते हुए को (परिवञ्चते) सब प्रकार कपट से वर्त्तने वाले को (नमः) वज्र का प्रहार (नमः पविः सृकः वृकः वधः वज्रः। निघण्टु अ० २ खं० २०) (स्तायूनां) चौर्योपजीवियों के (पतये) पति को (नमः) वज्र का प्रहार (निषङ्गिणे) राज्यरक्षा के लिये निरन्तर उद्यत (इषुधिमते) बाणों के धारण करने वाले को (नमः) सत्कारयुक्त करो (तस्कराणाम्) चोरों के (पतये) स्वामी को (नमः) वज्र और (सृकायिभ्यो-जिघांसद्भ्यः) सज्जनों के पीड़क मारने की इच्छा करने वालों को (नमः) वज्र हो (मुष्णतां पतये) चुराते हुओं के स्वामी को (नमः) वज्रप्रहार हो (असिमद्भ्यः) खड्ग वालों को (नक्तंचरद्भ्यो) रात्रि में घूमने वाले लुटेरों को (नमः)

शस्त्रप्रहार हो (विकृन्तानां पतये) विविध प्रकार से गांठ काटने वालों को मार कर गिराने वाले रक्षकों का सत्कार करो—

नम उष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमो नम इषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमो नम आतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नम आयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमः ॥

यजु० अ० १६ मं० २२ ॥

(उष्णीषिणे, गिरिचराय) श्रेष्ठ पगड़ी के धारण करने वालों और पर्वतों में विचरने वालों का (नमः) सत्कार करो (कुलुञ्चानाम्) दुष्टता से दूसरों के पदार्थ खोंसने वालों के (पतये) गिराने वाले का (नमः) सत्कार करो (इषुमद्भ्यो, नमः) बहुत बाणों वालों को भोजनादि से सत्कार करो (धन्वायिभ्यो वो नमः) धनुषों को प्राप्त होने वाले तुम लोगों का सत्कार हो (आतन्वानेभ्यः) अच्छे प्रकार सुख फैलाने वालों का (नमः) सत्कार करो (च) और (प्रतिदधानेभ्यो वो नमः) शत्रुओं के प्रति शस्त्रधारण करने वाले तुम को सत्कार प्राप्त हो (आयच्छद्भ्यो वो नमः) बुरे कर्मों से रोकने वालों को अन्न दो (च) और (अस्यद्भ्यो वो नमः) दुष्टों पर शस्त्र छोड़ने वाले तुम लोगों का सत्कार हो ॥

नमो विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः शयानेभ्य आसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमः॥ यजु० अ० १६ मं० २३॥

(विसृजद्भ्यः) शत्रुओं पर शस्त्र छोड़ने वालों को (नमः) अन्नादि पदार्थ (च) और (विद्ध्यद्भ्यो वो नमः) शत्रुओं को बींधने वाले वीरपुरुषों को उत्तम भोजनादि सत्कार (स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः) सोते और जागतों का सत्कार करो (आसीनेभ्यो वो नमः) आसन पर बैठने वाले तुम को सत्कार प्राप्त हो (तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमः) खड़े हुए और भागते हुए तुम को अन्नादि पदार्थ प्राप्त हों—

नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो नम आव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो

नमो नम उगणाभ्यस्तृथंहतीभ्य-श्च वो नमः। य० अ० १६ मं० २४॥

सभा और सभापतियों का सत्कार करो घोड़े और घोड़ों के रक्षकों का सत्कार करो, शत्रु सेना को बींधने वाली अपनी सेना को अन्नादि दो, शत्रु वीरों को मारती हुई सेनाओं और युद्ध में मारती हुई सेनाओं को भोजनादि दो, (उगणाभ्यः) त्रिविध तर्क वाली स्त्रियों का सत्कार हो (तृंहतीभ्यः) युद्ध में मारती हुई स्त्रियों का यथायोग्य सत्कार हो॥

अब जो मन्त्र कि इस वार पं० जी ने (नमस्ते रुद्र०) इत्यादि दिया है उस का भी आशय प्रकरणानुसार राज-विषयक ही है क्योंकि दुष्टों को दण्ड देकर रुलाने वाले राजा का वाचक यहां रुद्र पद है उसी में क्रोध बाण बाहु अर्थात् भुजा भी हो सक्ती हैं इस अध्याय १६ में लगभग ५० के मन्त्र हैं जिन में वार २ नमो नमः चला गया है जिस का अर्थ निघण्टु में यास्कमुनि ने वज्र, अन्न और सत्कार लिखा है।

इति-

ह० तुलसीरामस्य ह० कुमारसेन शर्मणः (फ़ारसी में) महावीर सिंह मं० आ० स०। शुकदेवप्रसाद मं० मू० पू० चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट-

ओ३म्

(पत्र सं ६ आर्य्यसमाज के साथ नीचे लिखा पर्चा भी आर्यों ही का था सो उद्धृत है)

वादी ने जो अन्धन्तमः इस मन्त्र पर पूर्वापर असंगति बताई उस में यह नहीं लिखा कि किस पद वा मन्त्र से

असंगति है और जो बड़े ज़ोर से कहा था कि (ब्रह्म के स्थान में) यह किस पद का अर्थ है, सो हमारा लेख देखा जावे उस में हमने ऐसा नहीं लिखा शायद आप पत्रों को देखते नहीं और मंत्र का अर्थ आपने स्वीकार कर लिया अर्थात् (असम्भूति अर्थात् उत्पत्ति रहित और सम्भूति अर्थात् उत्पत्तिमत् वस्तु की जो उपासना करता है वह नरक में पड़ता है यह अर्थ प्रतीत होता है) ऐसा आपने अपने पर्चे में लिखा है रही यह बात कि उत्पत्ति रहित ब्रह्म भी है तो उस की उपासना से भी नरक होगा सो ऐसा मत आप का होगा, वेद तो ऐसा प्रतिपादन करता है कि—

न त्वावां अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते। अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥ साम० उत्तरा०१ प्र० १ अ० ११ मं० २ ॥

अर्थ—हे मघवन् इन्द्र परमेश्वर! (त्वावान्) तेरे सदृश (अन्यः) और (दिव्यः) प्रकाशगुण वाला (न) नहीं (पार्थिवः) पृथिवी परमाणुजन्य पदार्थ (न) नहीं (जातः) उत्पन्न हुआ और (न, जनिष्यते) न होगा (वाजिनः) आप सर्वशक्तिमान् की (अश्वायन्तः) व्यापकता जानने की इच्छा करते हुये (गव्यन्तः) वेदवाणी की इच्छा करते हुए हम लोग (त्वा) आप को (हवामहे) बुद्धि में धारण कर सत्कार करें ॥

इस पर्चे में हमने भी तीसरा मन्त्र ईश्वर के अमूर्तिमान् होने में दिया और उस के साथ असम्भूति पदवाच्य ईश्वर की उपासना में जो दोष दिया था वह निराकृत हो गया हमारे निराकारप्रतिपादक ३ मन्त्रों में से १ मन्त्र (स पर्य्यगात्) में पण्डित जी ने ज़बानी दोष दिया यदि वह लिखते तौ हम भी लिखकर उत्तर देते हम ३ वार ३ मन्त्र दे चुके और आपने अर्थ का उद्धार नहीं किया—इति ॥

ह० तुलसीरामस्य ह० कुमारसेन शर्म्मणः

(फ़ारसी में) महावीरसिंह मं० आ० स० । शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट ।

(पत्र सं० ७ मूर्त्तिपूजकों का)

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ॥

इस मंत्र में सम्भूति और असम्भूति ये दोनों पद हैं उन का अर्थ उत्पत्ति और उत्पत्तिरहित ये अर्थ है, और आर्यसमाज के पण्डित ने ये कहा कि परमाणु की पूजा करने वाले नरक में जाते हैं, ये ऋचा का अर्थ है और परमाणुजन्य के पूजा करने वाला नरक कू जाता है सो असंगत है क्योंकि (प्राप्तौ सत्यां निषेधः) परमाणु तथा परमाणुजन्य की पूजा प्राप्त थी १ और असंगति इस मंत्र के सम्भूति असम्भूति ने जाहिर कर दीनी और आर्यसमाज के पण्डित ने नमः शब्द का अर्थ अन्नादि है सो असंगत है इस जगे पर २ अर्थ निघंटु के प्रमाण से नहीं लिये जांयगे क्यों नमः स्वस्तीति इस सूत्र करके सब वेदमंत्रों में चतुर्थी हो रही है प्रकृति

में सो नमः पद अन्नादि वाचक यहां नहीं है किन्तु अव्यय नमः वाचक है और आर्यसमाज पं० निघंटु के प्रमाण से ये कहा पं० नमस्ते रु० इस प्रकरण में कहीं सत्कार कहीं दण्ड क० अन्नादि इन अर्थों में भाष्यकार ने कहीं चतुर्थी नहीं करी और आर्यस० पं० नमो हृस्वाय मंत्र का अर्थ ईश्वर पर नहीं सो भी असंगत है क्योंकि द्वितीय मं० अथर्व कां० १ मं० २८ त्वं स्त्री त्वं पुमानसि इस मंत्र से उक्तपद सब ईश्वर पर है और भी खयाल करना चाहिये आ० स० पं० तु० ने ये कहा कि न त्वावां० सा० उ० १ प्र० १ अ० ११ मं० २ परमेश्वर निराकार है सो बड़े सन्देह की वार्त्ता है आप बु० धारण कर सत्कार करें देखो अमूर्त्त वस्तु बुद्धि में नहीं आसकता है और प्रकृत में रुद्रपद राजा का वाचक नहीं है क्योंकि शतपथ गोपथादि प्रमाण माने गये इस वास्ते कि वेद मंत्र के झगड़े पर सो जो शतपथादि प्रकृत में रुद्रपद को राजा वाचक कह दे में तो स्वीकार करना चाहिये अष्टाध्याई महाभाष्य से रुद्र का अर्थ धत्वानुसार होगा और आप का बड़ा शस्त्र आपने कहा अंधन्तमः ये मंत्र सो आप का मंत्रार्थ उलटा गया सो आप कू उस का उत्तर कहना आप कू योग्य है आप ने उस का उत्तर कुछ ना किया नमोहृ०–द० त्रिवेणीदत्त द० हजारीदत्त (फ़ारसी) महावीर सिंह मं० आ० स०। (फारसी) शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट—

(पत्र सं० ८ आर्य्यसमाज का)

ओ३म्

महाशय ! सम्भूति और असम्भूति पद इस मन्त्र में सहचरित हैं और (सहचरिताऽसहचरितयोर्मध्ये सहचरित-

स्यैव ग्रहणम्) जब कि उत्पत्ति वाले कार्य्यरूप परमाणुजन्य अर्थ में सम्भूति पद है तो सहचारी होने से असम्भूति पदवाच्य भी उत्पत्ति रहित उपादान कारण, परमाणु ही मन्त्रस्थ असम्भूति पद का अर्थ हुआ न कि ब्रह्म—दूसरे ब्रह्मोपासना तो करना चाहिये ही हम पूर्व पत्र में मन्त्र दे चुके हैं और जो पं० जी ने (प्राप्तौ सत्यां निषेधः) अर्थात् परमाणु और तज्जन्य पदार्थ की उपासना प्राप्त थी तभी तो निषेध किया, ऐसा कहा (उत्तर) अजी ! पं० जी वेद में तो ऐसा भी लिखा है कि (अघ्नाः, यजमानस्य पशून् पाहि) गोहिंसा न चाहिये—तथा (ब्राह्मणो न हन्तव्यः) यदि यह निषेधवाक्य पाया जावे तो इस का आशय क्या आप यह निकालेंगे कि गौ वा ब्राह्मण की हिंसाप्रचलित थी इस लिये अब भी करनी चाहिये, और नमः पद के अन्नादि वाचक होने पर क्या चतुर्थी विभक्ति नहीं पाती तथा जो अव्यय होते हैं क्या वे शब्द नहीं रहते अव्ययों के शब्द न होने में क्या हेतु है ? क्योंकि शब्द तो उसे कहते हैं जो [आकाशवायुप्रभवः) इत्यादि नाभिस्थान से वायु के उद्गमन के कारण तात्वादिस्थान विशेष में विभाग को प्राप्त होकर वर्णभाव को प्राप्त होता है वह शब्द कहाता है- और यह क्या कि नियमों में निघण्टु को मान कर अब कहते हैं कि निघण्टु का प्रमाण न लिया जायगा तथा —नमो ह्रस्वाय च, इस में स्त्री पुरुष का झगड़ा है और जो यह कहा कि निराकार वस्तु बुद्धि में नहीं आ सक्ती वाह २ पं० जी ऐसी शङ्का तो आप को युक्त ही थी इस का उत्तर तो

सर्वसाधारण भी दे सकते हैं कि आकाश इत्यादि बहुत पदार्थ निराकार हैं तो क्या समझ में नहीं आते—रुद्रशब्द का अर्थ (रोदयतेर्णिलुक् च) के अनुसार दुष्टों को दण्ड देकर रुलाने से राजपरक है, अन्धन्तमः इसका समाधान ऊपर लिखा गया, अब और एक मन्त्र निराकारप्रतिपादक सुनियेः—

अनेजदेकं मनसो जवीयो नै-
नद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्शत् ॥
य० अ० ४० मं० ४ ॥

अर्थः—वह परमेश्वर (अनेजत्) अकम्प (एकम्) एक और (मनसो जवीयः) मन से भी अधिक वेग वाला है अर्थात् मन का विषय नहीं । (एनत्) इस को (देवाः) इन्द्रियां (न) नहीं (आप्नुवन्) प्राप्त हो सकतीं यद्यपि वह उन में (पूर्वम्) पूर्व ही (अर्शत्) विराजमान है । समस्त मूर्त्तिमान् पदार्थ इन्द्रियों के विषय होते हैं इस लिये वह इन्द्रियगोचर न होने से अमूर्त्तिमान् सिद्ध हुआ—इति—११—५—९० ह०तुलसी-रामस्य ह० कुमारसेनशर्म्मणः (फ़ारसी में) महावीरसिंह म० आ०स०। शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० चतुर्भुजदास—प्रेसीडेन्ट ॥

(पत्र सं० ९ मूर्त्तिपूजकों का)

ओ३म्

आर्य्यसमाज की तरफ से वेदमन्त्र (अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते) इस मन्त्र के अर्थ की असंगति दूसरी वार जाहिर करी जाती है, हे सभासद् पुरुषो आप को श्रवण करना चाहिये ॥

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्म-
न्नेवानुपश्यति । सर्वभूतेषु चा-
त्मानं ततो न विचिकित्सति ॥
यजु० सं० अ० ४० मं० ६ ॥

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतानि, आ-
त्मैवाभूद्विजानतः । तत्र को मोहः
कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः ॥
यजु० सं० अ० ४० मं० ७ ॥

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम्,
अस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथा-
तथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वती-
भ्यस्समाभ्यः ॥ य०सं० अ०४०मं०८

भावार्थः—जो मोक्ष की इच्छा वाला सर्वाणि सब चेतन अचेतन को आत्मा में ही देखै और मेरे से अलग ये चेतन अचेतन नहीं है और मैं परं ब्रह्म हूं सब जगे व्याप्त हूं ऐसी ज्ञानी संशय से दूर है ६ दूसरे मन्त्र का अर्थ जिस अवस्था

में सब चेतन में आत्मबुद्धि हो जाय, इस तरह से कि आत्मवेदं सर्वं खल्विदं ब्रह्म ऐसे देखता हुआ जो ज्ञानी है, उस को उस अवस्था में ध्यान करते कोई मोह नहीं और कोई शोक भी नहीं क्योंकि संसार निवृत्ति होगया, उस का ७ तीसरे मन्त्र का अर्थ अब तीसरे मन्त्र से उस ज्ञानी के वास्ते वेद फल कहता है जो इस तरह से आत्मा को देखे सो ब्रह्म को प्राप्त भया कैसा ब्रह्म है शुक्र नाम शुद्ध है फेर कैसा ब्रह्म है अकाय लिङ्ग शरीर रहित, फे, फोड़ा फुन्सी जिस के नहीं शिर नाड़ी इत्यादि जिस के नहीं, ऐसे ब्रह्म कु वह ज्ञानी प्राप्त होता है और ज्ञानी कैसा कि, अट्ठी मन्त्र से उस का हाल कहा जाता है, क्रान्तदर्शन, पण्डित्, बुद्धिमान् सर्वतः ज्ञानवान्, ब्रह्मस्वरूपेण स्वयं ज्ञानवान् ऐसा ज्ञानवान् यथार्थता करके सब स्वस्वामि-भाव संबन्ध से पृथक् होकर ब्रह्म प्राप्ति उस का होती है, देखो अन्धन्तमः इस मन्त्र से पहले ३ मन्त्र सुना कर य कथन है कि आर्य्यसमाज ने जो कहा० स० पर्यगाच्छुक्रमकाय इस मन्त्र कू परमेश्वर के निराकार में कहना बड़े सन्देह की वार्त्ता है, स परमेश्वरः यह उक्त मंत्र मे अर्थ नहीं है, क्या है सज्ञानी ये अर्थ है, क्यौंकि पहिले २ मन्त्रौ में यद् शब्द ज्ञानी परक है उसी रीति से, सपर्यगात्, मन्त्र में तद् शब्द ज्ञानी परक है, अब अन्धन्तमः इस मन्त्र से पहिले मन्त्रों की ३ तीन की असङ्गति स्पष्ट जाहिर होगई अब अन्धन्तमः इस मन्त्र की अर्थासङ्गति भी सुननी चाहिये, भो सभासद् हो—द० त्रिवेणीदत्त शर्म्मा द० हजारीदत्त शर्म्मा—(फारसी

में) महावीर सिंह मं० आ० स० (फा०) शुकदेव प्रसाद मं० घ० स० चतुर्भुजदास—प्रेसीडेण्ट (इसी पर्चे के साथ अगले दो पर्चे भी आये थे सो आगे उद्धृत हैं)

(पत्र सं० १० मूर्त्तिपूजकों का)

श्रीः ॥

विदित होय कि जो [पण्डित्] आर्यसमाजी लिखते कि हमारी मंत्र की [असंगती] [संगती] का कुछ उत्तर नहीं दिया हम अपने पत्र में यह उत्तर दे चुके हैं कि असम्भूति यानी जिस की पैदायश न होय जिस की उपासना करने वाला नरक को जाता है तो ब्रह्म भी जो [उत्पत्ति] रहित यानी कभी पैदा न होने वाला है उस के उपासना करने वाले भी आप के आर्य्यों के अनुसार नरक में जाने चाहिये [पण्डित्] जी ने असम्भूति यानी पैदा न होने वाली चीजों में केवल परमाणु को किस तरह माना बाकी औरों को क्यों छोड़ दिया देखो [नाय] मत्तिक [अनुरार] परमाणु आकाश [काला] दिक् आत्मा मन ये सब विगर पैदायश ही है [पृथवप तजो वय्वाकाश] [काला] [दिक्] आत्मा मनांसि नित्य [द्रव्योणि] ये न्याय का सूत्रार्थ है (वाह २ देखिये एक पङ्क्ति में ६ अशुद्धियां और संस्कृत लिखने का घमण्ड) दूसरे दयानन्द ने परमाणु को [उत्पति] वाला पदार्थ माना है तुम उन से विरुद्ध न पैदा होने वाला कैसे मानते हो क्या उन को झूटे मानते हो २ दूसरे [पण्डित्] जी नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते चेत्यादि मन्त्र का अर्थ ये करते हैं कि बालक बोड़े बूढ़े अतिबूढ़े आप-

साथ बढ़ने वाले अग्रगाय जेष्ठ वा सत्कर्म में [अग्रसर] प्रथमाय प्रख्यात इन सबों को सत्कार करना वेद में लिखा है न कि परमेश्वर को हम [पंडित्] जी से [पुछते] हैं कि अथर्व० का० १० मं० २८ ॥

त्वम् स्त्री त्वम् पुमानसि त्वं [कुमारो] उत वा कुमारी त्वं [जीरणो] दण्डेन [वंचसि] विश्वतोमुख०

अर्थः—सर्वात्मरूप से इति करते हैं हे भगवन् आप ही स्त्री हो आप ही पुरुष हो आप ही बालक हो आप ही लड़की हो आप [बुढे] हो [दंड] लेकर चलने वाले हो [विराट] रूप आप ही हो यहां स्त्रीरूपादि किस के विशेषण हैं देखे [आर्य्यासमाज] के [पंडित्] जी को इस मन्त्र के अर्थ में क्या [शंका] बाकी रहती है यह मंत्र विस को बहुत अच्छी [तर है] प्रतिपादन करता है और अपने अर्थ में [पंडित्] जी ने कैसी गलती खाई है कि वो संवृधे के अर्थ अपने साथ [बडने] वाले लिखते हैं व्याकरण की [रीती] से सं उपसर्ग है और वृद्ध धातु है [सं] के अर्थ सम्यक् यानि भले प्रकार के हैं और वृधधातु के अर्थ [वृद् धौ] है यानी बढ़ना है ये सब [वैयाकरणी] भाष्य कार से आदि ले मानते हैं नहीं मालूम आर्य्य [पंडित्] कोन से व्याकरण से अर्थ किया करते हैं जो उन्हों ने अपने पत्र में संवृधे का अर्थ अपने साथ [वहने] वाले किया है और न्याय की [रीती] से भी इस का ये अर्थ नहीं हो सकता—

[तद्वति] [तत] प्रकारकोऽनुभवः [यथार्थ] तथा च शाब्दबोधे चैकपदार्थे अपरपदार्थस्य संसर्गः [संसर्गमरिदयाभासते] यथा नीलोघटः इत्यादि स्थले संसर्गमर्यादास्ति संवृधे इत्यत्र कास्ति संसर्ग मर्यादा [गदनीयं] भवद्भिः ॥

द० त्रिवेणीदत्त शर्म्मा द० हजारीदत्त शर्म्मा—चतुर्भुजदास प्रेसीडेन्ट (फारसी में) महावीर सिंह मं० आ० स० । शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० ॥

पाठकवृन्द ! और पत्रों की अशुद्धियों की तो गणना ही नहीं की है क्योंकि पं० जी ने इस पत्र में कदाचित् परीक्षा के लिये साढ़े ३॥ तीन पङ्क्तियां संस्कृत में लिखी हों इसलिये इस एक पत्र की अशुद्धियां के चिह्न [ ] ऐसे कोष्ठ ४४ चवालिस हैं और खास कर संस्कृत की ४॥ पङ्क्तियों में तो [मरिदया] आदि शुद्ध पदों से बहुत ही पाण्डित्य का परिचय दिया है ॥

धन्य हो यह पाण्डित्य और व्याकरण तथा न्याय का घमण्ड अस्तु इस से अगला पत्र भी उन्हीं का तीसरा था सो नीचे उद्धृत किया जाता है ॥

(पत्र सं० ११ मूर्त्तिपूजकों का)

महाशय! विदित होय कि आपनें जो लिखा कि निघंटु को प्रमाण मान कर अब न मानना ये तौ आप को भ्रम है क्योंकि नमः स्वस्ति सूत्र के अर्थ में नमस् न तौ ऐसा वैयाकरण लिखते है इससे व्याकरण की जो बात है सो व्याकरण

के आधीन है और जो कि आपने लिखा है कि नमो ह्रस्वाय इस मन्त्र में त्वं स्त्री त्वं पुमानसि इस का क्या मतलब है सो ये है कि आपने वहां ये लिखा है कि नमो ह्रस्वाय इस मन्त्र में ईश्वर का कोई भी नाम नहीं इस की सिद्धि के लिये दूसरे मन्त्र में ये सब ईश्वर कोई कहते है इस लिये आवश्यकता थी और जो ब्रह्म को निराकारता मानते हो तो आप को जगद्विषयक ज्ञानोत्पत्ति ज्ञानाश्रयत्व न बनैगे तथा परमाणु क्रिया कारकत्व न बनैगा० कुतः समवायी-कारणापरोक्षज्ञानचिकीर्षाकृतिमत्वं कर्तृत्वं० तथा ईश्वर के साकारता सिद्ध करने वाले चन्द्रमा मनसो जातः नाभ्या आसीदंतरिक्षथं इत्यादि सम्पूर्ण कर्मकांड है ॥

द० त्रिवेणीदत्त द० हजारीदत्त० चतुर्भुजदास० प्रेसीडेण्ट (फारसी में) महावीरसिंह मं०आ०स० शुकदेवप्रसाद मं०ध० स० ।

पाठकगण ! किंचित् ध्यान तो दीजिये कि आप साकार पदार्थ को ही कर्तृत्व सिद्ध करने के लिये—"समवायी कारण" इत्यादि न्याय का अशुद्ध संस्कृत प्रमाण देते हैं प्रथम तो प्रमाण केवल वेद का माना गया था खैर वेद को छोड़ न्याय पर चले तो भी किसी न्यायदर्शन के सूत्र को भी तो नहीं लिखा अब इस का उत्तर देना, मन्तव्य से बाहर हो कर व्यर्थ नहीं तो क्या है ? ॥ खैर तीनों पर्चों का उत्तर पढ़िये:—

ओ३म्

(पत्र सं० १२ आर्यों का)

महाशयो ! उत्पत्ति रहित समस्त पदार्थों में से ब्रह्म व्यावर्त्तक मन्त्र तो हम पूर्व लिख चुके हैं परन्तु आपने

उत्पत्ति सहित मूर्त्तिमान् की उपासना से नरक में जाना तौ मान ही लिया और यही हमारी प्रतिज्ञा थी अब उत्पत्ति रहित ब्रह्म की उपासना से नरक में जाना भी आप का ही मत रहा हम तौ वेद के मन्त्र (न त्वावां अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते। अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र! वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे) का अर्थ पद२ का पहिले लिख दिया है कि (संक्षिप्त) हे परमेश्वर तेरे समान कोई पृथिवी आदि जन्य पदार्थ नहीं है न होगा हम तुझ को बुद्धि में धारण करें इस से ब्रह्म की उपासना सिद्ध हुई दूसरा हेतु यह है कि ब्रह्म चेतन है उस की उपासना से नरक नहीं हो सकता जड़ की पूजा से जड़ता अर्थात् अज्ञानान्धकार रूप नरक होता है क्योंकि चेतन तौ उपासक की भक्ति को जानकर प्रसन्न हो सकता है जड़ नहीं हो सकता—आप का मन्त्र (नमो ह्रस्वाय च) जिस की पुष्टि को (त्वं स्त्री त्वं पुमानसि) यह मन्त्र दिया था उस का भी अर्थ जीव विषय में है क्योंकि हम उस पर निरुक्त प्रमाण देते हैं॥

मातरो विविधा दृष्टाः पितरः सुहृदस्तथा। अवाङ्मुखः पीड्यमानो जन्तुश्चैव समन्वितः॥

इस से यह साक्षी हुई कि जीव ही अनेकों का पुत्र अनेकों का पिता मित्र आदि बनता है परमेश्वर नहीं। और उस में यह भी तौ लिखा है कि (त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि) तू बूढ़ा होकर लाठी पकड़ के चलता है वाह २

मूर्त्तिपूजकों का परमेश्वर लाठी पकड़ कर भी चलता है ? महाशयो ! सोचो तो सही यह मन्त्र जीवविषय में ही संगत होता है ईश्वरविषय में नहीं ॥

और संवृधे पद के अर्थ में आपही भूल गये क्योंकि वहां संवृधे पाठ ही नहीं है सवृधे पाठ है जब आप को पाठका ही निश्चय नहीं है तो अर्थ पर क्या दशा होगी वाह ! रे !! पाण्डित्य !!! और संस्कृत तो आपने खूब ही लिखा मर्य्यादा के स्थान में मरिदया, धन्य हो—फिर जिस आशय पर (संवृधे पर) पङ्क्ति लिखते हो वह पाठ ही वैसा नहीं है। और (अनेजदेकं मनसो ज०) इस से जो हमने सिद्ध किया कि ईश्वर इन्द्रियों का विषय नहीं उस को भी आपने मान लिया क्योंकि उस में साकार होने का कोई अर्थ नहीं लिखा यह आप का दूसरा स्वीकार अप्रतिमता में हुआ तीसरा यह हुआ कि (न त्वावां अन्यो दिव्यो न पार्थिवो०) इस का अर्थ भी आपने कुछ न करके हमारे ही अर्थ को मान लिया चौथा मन्त्र हम आगे साफ २ ही (न तस्य प्रतिमा अस्ति०) लिखते हैं नमस् मतौ यह कौनसा वैयाकरण लिखता है ? इस विषय में पाणिनि और पतञ्जलि ही का मान्य होगा अन्य का नहीं। चन्द्रमा मनसो जातः नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो० इत्यादि का अर्थ आप ने कुछ नहीं लिखा—हां ! आपने जो लिखा कि ज्ञानी और क्रान्तदर्शन उपासक उस परब्रह्म को शरीररहित फोड़ा फुन्सी जिस के नहीं ऐसा जानता है सो हम तो यही चाहते हैं कि सब को ज्ञान हो जिस से उस निराकार ब्रह्म को जानें हां,

अज्ञानी लोग तो ब्रह्म को लाठी लेकर चलने वाला गर्भ में उलटा लटकने वाला बूढ़ा होने और मरने वाला मान रहे हैं सो हम अज्ञान (जहालत) को दूर करके ज्ञानी बनाना चाहते हैं आप स्वयं अज्ञानी और अन्य सब को अज्ञानी रखना चाहते हैं खैर ज्ञानी अर्थात् विद्वान् को निराकार ब्रह्म मानना आपने मान लिया बड़ी दया की और दूसरी दया यह की कि उस से पहिले दो मन्त्र (यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्नेवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति—यस्मिन्त्सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद्विजानतः। तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः) जो दिये उन में तो आप ने स्वयं प्रतिमापूजन का खण्डन कर दिया क्योंकि उन का अर्थ तो यह है (यस्तु०) जो मनुष्य सर्वभूतों में परमात्मा को और परमात्मा में सर्वभूतों को जानता है वह संशय को नहीं प्राप्त होता जो अपने सदृश सब को (मित्रभाव से) जानता है वहां शोक और मोह कहां ? किन्तु परमेश्वर को सर्वान्तर्य्यामी जान कर किसी से विरोध का भाव न रखना चाहिये अब इन दोनों मन्त्रों से आप ही ने प्रतिमापूजन का खण्डन कर दिया और सिद्ध कर दिया कि ज्ञानी लोग उस ब्रह्म को निराकार मानते हैं और जानते हैं अज्ञानी उस को उलटा मानते हैं॥

ह० तुलसीरामस्य १२—५—९० ह० कुमारसेनशर्मणः

(इसी के साथ दूसरा पर्चा नत्थी किया हुआ आर्यों का)

(पत्र सं० १३ आर्यों का)

ओ३म्

अब विचारना चाहिये कि हमारी ओर से आप के अर्थों में दोष दिखलाये गये और हरबार एक २ मन्त्र ईश्वर के अप्रतिम होने में प्रमाण दिया गया अर्थात् अद्या-वधि हम चार मन्त्र उक्त विषय में दे चुके हैं जिन में से एक पर भी स्वपक्ष पुष्टि आप लोग न कर सके अब बहुत ही स्पष्टता से सुनियेः—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः। हिरण्यगर्भ इ-त्येष मा मा हिंसीदित्येषा यस्मान्न जात इत्येषः॥

य० अ० ३२ मं० ३॥

अर्थ—(यस्य) जिस का (नाम) प्रसिद्ध (महद्यशः) बड़ा यश है (तस्य) उस की (प्रतिमा) प्रतिमान, तोलन साधन, प्रतिकृति वा आकृति (न अस्ति) नहीं है। (हिरण्यगर्भ इत्येषः) वह हिरण्यगर्भ अर्थात् सूर्य्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार (मामाहिंसीदित्येषा) मुझ जीव को मत दुःख दे यह प्रार्थना है (यस्मान्नजात इत्येषः) जिस से कि वह जन्म नहीं लेता (इस लिये उस की प्रतिमा नहीं—इति—

ह० तुलसीरामस्य० १२—५—९० ह० कुमारसेनशर्मणः

(फ़ारसी में) महावीरसिंह मं० आ० स० । शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० चतुर्भुजदास (प्रेसीडेन्ट)

बस शास्त्रार्थ लिखित (तहरीरी) यहां समाप्त हो चुका क्योंकि यह पर्चा आर्य्यसमाज का १२—५—९० के सायंकाल को पढ़ा गया था और १३—५—९० तारीख को धर्मसभा वालों (मूर्त्तिपूजकों) की ओर से होना चाहिये था परन्तु इस पत्र का उत्तर मूर्त्तिपूजक देते ही क्या निदान पत्रोत्तर न देकर यह लिख कर भेजा कि—

पर्चे कल के में कार्यरूप परमाणु को नित्य माना पर्चा शुरू में कारण रूप को नित्य माना है वो लेख दिखलाना चाहिये ॥

ह० कृष्णानन्द शर्म्मा द० त्रिवेणीदत्त शर्मा (फा०) मं० आ० समाज । चतुर्भुजदास (प्रेसीडेन्ट) शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० ।

महाशयो ! कल तो यह लिखा था कि दयानन्द ने परमाणु को अनित्य माना तुम नित्य कैसे मानते हो परन्तु जब उक्त बहाना से भी शास्त्रार्थ न टला तो इस झूंठे दावे पर कमर बांधी कि कार्यरूप परमाणु को कल के पर्चे में नित्य माना था निदान झूंठ से कब काम चलता है और शास्त्रार्थ से कब बच सकते थे आर्य्यों ने उत्तर दिया कि:—

हमने किसी पर्चे में कार्य्यरूप परमाणु को नित्य नहीं माना इति सिर्फ कारण, परमाणु, वा प्रकृति को ही नित्य लिखा है । तुलसीरामः (फ़ारसी में) चतुर्भुजदास (प्रेसीडेन्ट) शुकदेवप्रसाद मं० ध० स० । महावीरसिंह मं० आ० स० ॥

इस पर भी बहुत ही बहाने वाजी की फिर एक कटे हुए पर्चे को दिखलाने लगे तिस पर स्पष्ट साफ किया हुआ पर्चा जिस में धर्मसभा के मन्त्री के हस्ताक्षर तथा प्रेसीडेन्ट साहब के भी हस्ताक्षर थे दिखलाया तो फिर कुछ न चली और इसी टालटोल में ६ बजने को आये तब १२ ता० के आर्यों के पत्र का उत्तर तो असम्भव था लाचार मुन्शी शुकदेवप्रसाद साहब मं० मूर्त्तिपूजकों ने फरमाया कि समय थोड़ा है आज शास्त्रार्थ जुबानी हो तिस पर आर्यों ने यह समझ कर कि तहरीरी शास्त्रार्थ में तो ये लोग परास्त हुए अब अपने आप लेख से नकार करते हैं अस्तु० जुबानी ही सही इस पर दूसरी चाल चली कि प्रथम आर्य्य लोग कहैं फिर हम कहैंगे-भला पाठकगण ! विचार का स्थल है कि प्रथम तो लेख द्वारा उत्तर देने से हटे अब जुबानी भी १२ ता० के पत्र का उत्तर नहीं देते और आर्यों से कहते हैं कि प्रथम तुम कहो फिर हम कहेंगे इस पर ठाकुर महावीर सिंह मं० आ० स० ने बहुत ही उत्तर देने की प्रार्थना की परन्तु वहां उत्तर कहां था अन्त को आर्य्य पं० तुलसीराम शर्मा ने २० मिनट में शास्त्रार्थ के समस्त पर्चों का निगमन निचोड़ सभा में सुनाया जिस का सारांश यह था कि:-

अब सब सभासदों को विचारना चाहिये कि सब से पहिले हम ने (अन्धन्तमः०) यह मंत्र दिया था जिस का अर्थ पं० जी ने भी वही मान लिया जो हमने किया था केवल (असम्भूति) पद पर यह शङ्का की थी कि ब्रह्म भी असम्भूति होने से उपास्य नहीं रहा सो असंभूति पदवाच्य

ब्रह्म की इस मन्त्र में व्यावृत्ति के ज्ञापक में (न त्वावां अन्यो दिव्यो०) यह मन्त्र दिया जिस में निराकार ब्रह्म को बुद्धि में धारण कर उपास्यत्व की विधि है। और चेतन होने से ब्रह्मोपासना सफल और जड़ोपासना निष्फल क्या अज्ञान में डालने वाली हमने ही नहीं मानी किन्तु आपने भी मान ली और मूर्त्तिपूजा का लिखा (नमो ह्रस्वाय च०) मन्त्र और उस की पुष्टि (त्वं स्त्री त्वं पुमानसि०) से भी ईश्वर-विषयक सिद्ध नहीं हुआ निरुक्त प्रमाण (मातरो विविधा०) इत्यादि से यही सिद्ध हुआ कि छोटा, बड़ा, बौना, बूढ़ा, पिता, पुत्र, लड़की लड़का मित्र आदि संज्ञा को जीव ही प्राप्त होता है इस लिये इन मन्त्रों में ईश्वर का नाम न आने से ये मन्त्र जीवविषयक ही सिद्ध हुए—फिर हमारे तीसरे मन्त्र (सपर्यगात्०) का अर्थ भी पं० जी ने विना विवाद स्पष्ट ही मान लिया कि ज्ञानी उस ब्रह्म को निराकार मानते हैं अज्ञानियों (जाहिलों) को आर्य्यसमाज ज्ञान सिखला कर ज्ञानी बनाना चाहता है चौथा मन्त्र (अनेजदेकं मन०) का अर्थ भी पं० ध० सभा ने मानलिया क्योंकि कोई अर्थ अपनी तरफ़ से साकार पक्ष में न कर सके पांचवें मन्त्र (न तस्य प्रतिमा०) पर लेख का शास्त्रार्थ ही करने से इनकार कर दिया अस्तु० अब देखें पं० जी ज़ुबानी इन मन्त्रों का अर्थ क्या करते हैं हम आशा करते हैं कि पं० जी नये मन्त्र न पढ़ कर इन्हीं मन्त्रों का अर्थ करेंगे। इति—

इस पर पं० कामानन्द जी तो चुप होगये और पं० त्रिवेणीदत्त जी चौकी पर बैठ कर पत्रा हाथ में लेकर पढ़ने

लगे उन से कहा भी गया कि आपने स्वयं जुबानी शास्त्रार्थ करना आरम्भ किया अब आप पर्चा हाथ में न रखिये परन्तु जब उन्हों ने पर्चा न छोड़ा तब ठाकुर महावीरसिंह जी म० आ० स० ने कहा कि यदि तुम्हारे कुछ याद नहीं है तो पर्चे ही से कहो इस पर भी पर्चा न छोड़ा और पूर्व मन्त्रों का अर्थ न करके दो चार जहां तहां के मन माने मन्त्र पढ़कर कह दिया कि प्रतिमापूजन सिद्ध भया आर्य्यसमाज झूंठा, बोलो सनातनधर्म की जय । इत्यादि इस पर आर्य्य पं० बाबू गङ्गाप्रसाद जी ने इन के मन्त्रां का अर्थ किया जिस से स्पष्ट सिद्ध हुआ कि इन मन्त्रों में प्रतिमापूजन तो क्या प्रतिमा शब्द तक भी नहीं है इस के पश्चात् मुन्शी शुकदेवप्रसाद साहब म० मू० पू० ने फर्माया कि प्रतिमापूजन वेद से क्या हम युक्तियों से भी सिद्ध करते हैं इत्यादि कह कर बोले सनातन धर्म की जय कह कर आरती कर अंगरेजी वाजे पर मूर्त्तिपूजा की पराजय के डङ्के साथ बाजार की राह निज२ गृह पधारे और इधर श्रीमान् पं० भीमसेन शर्मा जी आदि (जो इसी शास्त्रार्थ में खुरजे पधारे थे) आर्य्यभद्र पुरुषों की सम्मति अनुसार खुरजे (पोपगढ़ी) में आर्य्यसमाज (जयस्तम्भ) स्थापन करने की ठहरी सब से पहिले श्रीमान् ठाकुर महावीर सिंह वर्मा ने खड़े होकर पूरा जोश व्याख्यान में यह दिखाया कि हम को वैदिकधर्म पर दृढ़ रहना चाहिये आज मेरे हर्ष की सीमा नहीं है कि आज मैंने इस जिले में अपने १० वर्ष के परिश्रम को सफल समझा है और मैंने अपने ऊपर की घोर आप-

स्त्रियों का बदला पाया है इत्यादि फिर बाबू शिवदयाल सिंह मैनेजर वैदिक यं० प्रयाग ने एक मनोहर व्याख्यान से आर्य्यसमाज को दृढ़ता दी और इस के अनन्तर बाबू गङ्गाप्रसाद जी बी० ए० क्राम आगरा ने आर्य्यसमाज के १० नियमों का सारगर्भित व्याख्यान किया तदनन्तर बाबू शिवदयालसिंह के प्रस्तावानुसार आर्य्यसमाज स्थापित हुआ इस समय उपस्थित सभासद् २५ के नाम लिखे गये और इतने ही अनुपस्थित भी रह गये होंगे—

बाबू चतुर्भुजदास साहब वकील जो इस शास्त्रार्थ में सभापति हुए थे उन पर शास्त्रार्थ का यह असर हुआ कि उक्त बाबू साहब साम्प्रतिक समाज के सभापति (प्रेसीडेण्ट) नियत हुए और मुन्शी नन्दकिशोर साहब मन्त्री (सेक्रेटरी) और लाला श्यामलाल साहब कानूनगो उपसभापति (वाइस प्रेसीडेंट) तथा माष्टर स्कूल उपमंत्री (असिस्टेंटसेक्रेटरी) मुन्शी गङ्गाप्रसाद जी पुस्तकाध्यक्ष (लाइब्रेरियन्) नियत हुए तथा लाला जी कोषाध्यक्ष नियत हुए तत्पश्चात् ठाकुर महावीर सिंह वर्मा चांदीखने ५) आर्यसमाज नूतन को भेंट किये समाज, उक्त ठाकुर साहिब के परिश्रम और उदारता का जहां तक धन्यवाद दे थोड़ा है इस समय अनुमान रात्रि के ११ बज गये होंगे इस कारण समाज विसर्जन हुआ इस शास्त्रार्थ में ठाकुर हुक्मसिंह वर्मा सीकरा का उत्साह धन्यवाद के योग्य था अगले दिन १४ ता० को श्रीयुत पण्डित भीमसेन शर्मा जी आदि समस्त आर्य्य पुरुष ईश्वर से साम्प्रतिक समाज की चिरस्थायिता की प्रार्थना करते हुए निज २ धाम को पधारे—ओ३म् शान्तिः ३

॥ अनुमति ॥

खुर्जा के शास्त्रार्थ में मुझ को भी निमन्त्रण आया था। कारण यह था कि प्रतिपक्षी लोग नामी पण्डित हरियशराय जी आदि को बुलाने के लिये भी जाने गये थे इसी लिये आर्य्यलोगों ने मुझे बुलाया था यदि आर्यलोगों को मालूम होता कि यहा मूर्त्ति पूजकों के पक्ष में बाहर से कोई पण्डित न आवेगा तो मुझे बुलाने का परिश्रम न उठाते क्योंकि खुर्जा में शास्त्रार्थ करने के लिये जैसे पं० उद्यत हुए थे उन के लिये आर्य पण्डित भी अच्छे वावदूक उपस्थित थे जो मुख्य कर अलीगढ़ बुलन्दशहर के समीप ही रहते हैं।

जब मैं नियत समय खुर्जा में पहुंचा उस समय शास्त्रार्थ के लिये एक स्थान में दोनों पक्ष के लोग उपस्थित पाये लगी हुई सभा को देख कर चित्त को बड़ी प्रसन्नता और आश्चर्य हुआ! प्रसन्नता इस से हुई कि यहां प्रतिपक्ष में भी लोग उद्यत हैं मुझ को व्यर्थ नही पड़ा रहना पड़ेगा। बुलन्दशहर में जहा अच्छे २ नामी धुरन्धर पण्डित इकट्ठे हुए थे वहां मैं शास्त्रार्थ के लिये छः दिन व्यर्थ पड़ा रहा तब एक दिन ३ घंटा बड़ी कठिनता से शास्त्रार्थ हुआ था यहां वैसी दिक्कति नहीं होगी। ऐसा विचार कर पौराणिक लोगों को मैंने चित्त में धन्यवाद दिया। पर वास्तव में अनजान चिड़ियां फंस गई थीं। सो यह प्रसिद्ध वार्ता है कि अल्पज्ञ लोगों को अभिमान वा अहङ्कार विद्वानों से

अधिक होता है वे यही समझते हैं कि हमारे तुल्य कोई नहीं ऐसे लोग समय पर अवश्य दुम दबाते हैं। दूसरे के जो लोग शास्त्रार्थ कर चुके हैं उन से अब कोई फिर कहे कि अब शास्त्रार्थ करलो तो कदापि सन्नद्ध न होंगे। इसी से उन के हारजाने की भी पूरी परीक्षा होजायगी॥

शास्त्रार्थ के आरम्भ में इस बात का विवाद रहा कि किस की ओर से आरम्भ हो आर्य लोगों की इच्छा थी कि जब हमारा पक्ष है कि वेद में पाषाणादि मूर्त्तियों की पूजा का विधान नहीं और पौराणिक लोग होने की प्रतिज्ञा करते हैं तो वे सिद्ध करें। हम पहिले कुछ क्यों कहें। और पौराणिक लोग डरते थे कि हमने कुछ कहा तो पहिले ही ये लोग पकड़ न लेवें इत्यादि विचार से पौराणिक लोग जब किसी प्रकार न बोले तो सब की सम्मति हुई कि आरम्भ आर्यसमाज ही की ओर से हो परन्तु पहिला पर्चा गिनती में न लेकर पहिला प्रारम्भ पौराणिकों से ही समझा जायगा। परन्तु पीछे जाकर इस प्रतिज्ञा को मु० शुकदेवप्रसाद मंत्री धर्मसभा ने लौट दिया और सभा के बीच ही में कह दिया कि शास्त्रार्थ का आरम्भ आर्यों की ओर से हुआ है इस से स्पष्ट अन्याय प्रतीत होता है॥

जब शास्त्रार्थ होने लगा तो मेरे चित्त में कई बार सभा में बोलनेका उमंग उठा कि मैं कुछ बोलूं पर लोगों ने बोल ने नहीं दिया कि तुम्हारी योग्यता का कोई परिचय नहीं।

जब मूर्त्तिपूजा निषेध का मन्त्र आर्यों ने दिया तो उस का उत्तर देना था कि यह तुम्हारा अर्थ वा पक्ष इस

प्रकार ठीक नहीं जब उत्तर न दिया तो खण्डन सिद्ध होगया फिर अपने पक्ष की सिद्धि का प्रमाण वेद से देना था सो भी नहीं दिया। (हे परमेश्वर तुम छोटे हो वा बौने हो) ऐसा कहने से मूर्त्तिपूजा कब सिद्ध होगई ? । यह कथन तब सार्थक होता कि परमेश्वर कितना लम्बा चौड़ा छोटा बड़ा है ऐसा प्रश्न किया जाता वहां तो यह प्रसंग था कि पाषाणादि मूर्त्तियों के द्वारा उस की पूजा करना चाहिये या नहीं इस का विधि निषेध दोनों पक्ष को दिखाना चाहिये था सो परमेश्वर के बौने होने से कुछ सम्बन्ध नहीं रखता परमेश्वर कैसा ही हो। सो अपने पक्ष का स्थापन और द्वितीय पक्ष का खण्डन न करने से प्रारम्भ में ही पौराणिकों का पराजय होगया तो भी निर्लज्जता से कुछ २ तीन दिन कहते रहे सो सब इस पुस्तक में लिखा गया है बीच २ कई स्थल में ऐसे गिरे हैं जिस से स्पष्ट पराजय प्रतीत होता है सो पाठक लोग देख लेंगे॥

ह० भीमसेनशर्म्मणः